राजा भोज : राज्याभिषेक के एक हजार साल

तीन थे सरस्वती कंठाभरण

विजय मनोहर तिवारी

परमार वंश के महान् राजा भोज को एक हजार साल हो गए। इतना वक्त बीतने के बाद भी भोज हमारी स्मृतियों में जिंदा हैं। सिर्फ इसलिए नहीं कि वे राजा थे। हजारों साल के इतिहास में सम्राट, राजा, सुलतान, बादशाह और नवाब तो अनगिनत हुए हैं, जिनके या तो नाम भी नहीं मालूम या जिन्हें सिर्फ सिंहासन और सत्ता की खून-खराबे से भरी लड़ाइयों के कारण याद किया जाता है। ऐसे नाम गिने-चुने ही हैं, जिन्होंने शासक होकर ज्ञान-विज्ञान, नीति-न्याय और निर्माण-वास्तु के हैरतअंगेज अध्यायों की रचना स्वयं की है। जो गुणों से स्वयं संपन्न थे और इसीलिए गुणीजनों को अपने आसपास एकत्रित कर पाए। इस संयोग ने इतिहास को समृद्ध करने के साथ हमें भी गौरव से भरा है। राजा भोज सम्राट अशोक, विक्रमादित्य और हर्षवर्द्धन जैसा ही एक चमकदार नाम है। मौजूदा मध्यप्रदेश का धार भोज के समय शहर परमार वंश की राजधानी थी।

भोज ने अपने पीछे जबर्दस्त निशान छोड़े हैं, जो पिछले एक हजार साल में देश के इतिहास में गुजरी कई कातिल करवटों का कोप झेलने के बावजूद बचे हुए हैं। पत्थरों पर कहीं खंडित, कहीं अधूरे, लेकिन दस्तावेजों में पूरे। भोपाल की पुरातन पहचान बड़ी झील, भोजपुर के मंदिर के दूर तक फैले पथरीले प्रांगण, मांडू के शाही परिसर, उज्जैन के शिप्रा किनारे और अपनी प्रिय धारा नगरी में भोज के सबूत अपने वैभव की गवाही खुद देते हैं। इनके अलावा उनके राज्य की सीमाओं में रहे दूर-दराज के अनगिनत गांवों-कस्बों में प्राचीन निर्माण कार्यों में परमार राजाओं की परंपरा के अवशेष अब तक बिखरे हुए हैं और खुदाइयों में या अनायास ही गुमनाम इतिहास की झलक अक्सर दिखा देते हैं। विदिशा का विजय मंदिर इसका सबसे जीवंत प्रमाण है। राजा भोज के सहस्त्राब्दि वर्ष के बहाने इतिहास की चर्चा

भोजपुर का शिव मंदिर

परमार राजवंश में नौवें राजा भोज...

परमार राजवंश ने आठवीं शताब्दी से लेकर चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक राज्य किया। इतिहासकारों के अनुसार परमारों की राजधानी पहले उज्जयिनी में थी। राजा भोज ने राजधानी का यह गौरव अपनी प्रिय धारा नगरी को दिया। वे परमारों में नौवें राजा थे। ईस्वी सन् 800 से 1305 के बीच 25 राजाओं ने राज्य किया। उपेंद्र इस राजवंश के संस्थापक शासक हैं। उनके बाद वैरीसिंह प्रथम, सियक प्रथम, वाकपति, वैरीसिंह द्वितीय, सियक द्वितीय, वाकपति राज व सिंधुराज हुए। सिंधुराज के सुपुत्र थे राजा भोज प्रथम, जिन्होंने 1010 ईस्वी में सत्ता संभाली और 1055 तक राज्य किया। उन्होंने कई युद्ध लड़े और दर्शन, वास्तु, साहित्य, भाषा, व्याकरण, कला व संस्कृति के विभिन्न विषयों पर करीब 84 ग्रंथों की रचना की। इनमें सरस्वती कंठाभरण और समरांगण सूत्रधार की ख्याति इतिहास में सर्वाधिक है। भोज के उत्तराधिकारियों में उदयादित्य और नरवर्मन भी बड़े प्रसिद्ध हुए, जिन्होंने बेहतरीन निर्माण कार्यों की परंपरा को जारी रखा। भोज के समय ही भारत ने मेहमूद गजनवी के आक्रमणों को झेला। इतिहास के उस विकट मोड़ पर भोज भारतीय संस्कृति के उस सूर्य की तरह चमके, जिस पर कई सौ सालों का ग्रहण लगने वाला था।

का सबसे दु:खद पहलू यही है कि इक्कीसवीं सदी में विकास की नई पायदानों पर तेजी से आगे बढ़ते हुए हम अपने असल अतीत के बारे में ही सबसे कम जानते हैं। राजा भोज हमें अपने उसी उजले अतीत की याद दिलाते हैं, जिसे जानना सबके लिए जरूरी है।

ऐसी मिसालें कम हैं

भोज ने संस्कृत और संस्कृति के लिए जो किया है, उसकी मिसालें इतिहास में कम ही नजर आती हैं। बर्बर, जाहिल और क्रूर विदेशी आक्रांताओं की आंधी में काफी कुछ खत्म होने के बावजूद खंडहर बताते हैं कि वो इमारत कितनी बुलंद थी। धार की जिस भोजशाला की प्रतिष्ठा एक हजार साल बाद भी है, वह भोज की सबसे महान् रचनाओं में से एक मानी जाती है। वह भोज के सारे रचनात्मक कर्म का केंद्र थी। वह उनका 'पावर-हाउस' था। लेकिन भोज के समय इसका नाम भोजशाला नहीं था, न हो सकता था। मध्यप्रदेश मूल के कितने लोगों को यह पता है कि भोज के समय इस भव्य परिसर का नाम था-सरस्वती कंठाभरण। इस नाम की राजा भोज की एक उपाधि भी थी और उनके लिखे दो ग्रंथों के नाम भी यही थे। कितने लोगों को यह पता है कि भोज ने अपनी राजधानी वर्तमान धार के अलावा दो और सरस्वती कंठाभरणों का निर्माण कराया था। पहला उज्जैन में, जो राजा भोज के पिता सिंधुराज के समय परमारों की पहली राजधानी थी और तीसरा मांडू में, जिसे तब मंडपदुर्ग के नाम से जाना जाता था। ये तीन सरस्वती कंठाभरण ज्ञान की देवी सरस्वती के नाम पर स्थापित संस्कृत की महान् विद्यापीठें थीं।

कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा

वक्त के साथ सब कुछ बदलता गया और मालवा के पहले मुस्लिम सुल्तान दिलावर खां गौरी ने इन तीनों भवनों को एक साथ सन् 1401 में ध्वस्त करा दिया। मूल भवनों के ध्वंसावशेषों से ही इबादतगाहों की शक्ल में चौकोर इमारतें खड़ी कर दीं, लेकिन खंडित हों या साबुत पत्थर झूठ नहीं बोलते। धार की भोजशाला के भीतर एक-एक स्तंभ, दीवारों और फर्श पर उलट-पलटकर जड़ दिए गए मूल सरस्वती कंठाभरण के एक-एक शिलाखंड असल इतिहास की झलक स्वयं दिखाते हैं। मांडू घूमने आने वाले पर्यटकों को शाही परिसर के आखिरी कोने में उस इमारत की ऐतिहासिक असलियत कोई नहीं बताता, जहां कभी संस्कृत के अध्ययन के लिए दूर-दूर से विद्यार्थी आकर रहते थे, आज वहां दिलावर खां के मकबरे का साइन बोर्ड लगा है। इसकी हालत साफतौर पर कहीं की ईंट और कहीं के रोड़े की है। पुरातत्व वालों की नजर में यह इस्लामिक पठानी स्थापत्य कला का नमूना है। इस स्मारक के पास वह थिएटर आज भी करीब-करीब अपने मूल रूप और आकार में मौजूद है, जहां कभी संस्कृत के नाटकों का मंचन हुआ करता था। यही हाल उज्जैन में अनंतपेठ मोहल्ले की उस इमारत का है, जिस पर मस्जिद बगैर नींव का साइन बोर्ड टाँग दिया गया। ये तीनों स्थान किसी समय संस्कृत के आचार्यों और विद्यार्थियों की सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रसिद्ध केंद्र रहे हैं।

दस्तावेजों में दर्ज है

सिर्फ अपनी दिलचस्पी के चलते बतौर पत्रकार मैंने करीब दस साल पहले भोज के इस कृतित्व पर डेढ़ साल तक अध्ययन किया। इन स्मारकों को देखने कई बार गया। इंदौर में नईदुनिया की प्रतिष्ठित लाइब्रेरी के अलावा पुरातत्व संग्रहालयों की लाइब्रेरी के दस्तावेजों में दाखिल हुआ। 1912 में मेजर सीई लुआर्ड की लिखी पुस्तक धार एंड मांडू में मेजर ने मांडू के मकबरे का जिक्र किया है। उस परदेसी ने भी इस स्मारक को मूल मकबरे के रूप में स्वीकार नहीं किया है। वह इसमें किसी देवालय के चिन्ह देखकर अभिभूत नजर आता है। करीब सवा चार सौ पेज की दूसरी किताब 'राजा भोज का रचना विश्व' एक शोध ग्रंथ है। यह डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित की रचना है। उनकी शोध बताती है कि भोज स्वयं कवि थे। उन्होंने विभिन्न विषयों पर 60 ग्रंथों की रचना की थी। उनकी विद्वानों की परिषद में करीब पांच सौ साहित्यकार व अन्य विषयों के विशेषज्ञ विद्वान मौजूद थे। इनके लिए ही भोज ने सरस्वती कंठाभरण या शारदासदम् नामक सभा बनवाई थी। सन् 1034 में इसी स्थान पर भोज ने अपनी आराध्य वाग्देवी की प्रतिमा प्रतिष्ठित कराई थी, जो आजकल ब्रिटिश म्यूजियम में प्रदर्शित है। पद्मश्री विष्णुश्रीधर वाकणकर ने लंदन यात्रा के बाद इसकी जानकारी तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को दी थी। वह प्रतिमा अंग्रेज 1904 में लेकर गए थे।

एक राजा, अनेक आयाम

भोज का रचना संसार आश्चर्यजनक है। उन्होंने विविध विषयों पर करीब 84 ग्रंथों की रचना की। इनमें वास्तुशास्त्र पर केंद्रित 'समरांगण सूत्रधार' सबसे खास माना जाता है। इसके अलावा तत्वप्रकाश, श्रृंगार प्रकाश और शब्दानुशासन भी प्रमुख हैं। परमार राजवंश के गहरे अध्येता इतिहासकार डॉ. शशिकांत भट्ट बताते हैं कि संस्कृत को सरल ढंग से सिखाने के लिए भी भोज ने आसान तरीके विकसित किए थे, जिनकी झलक अब भी उनकी भोजशालाओं में दिखाई देती है। भोज ने दिगंबर जैन कुलचंद्र को अपना सेनापति

धार में राजाभोज का सरस्वती कंठाभरण

विदिशा में विजय मंदिर का ध्वस्त प्रवेश द्वार

नियुक्त किया था। इतिहासकार के.के. चक्रवर्ती के अनुसार श्रवणबेलगोला के एक कन्नड़ अभिलेख में भोज को जैन आचार्य प्रभाचंद्र की वंदना करते हुए चित्रित किया गया है। भोज ने अपने सरस्वती कंठाभरण की राजसभा में जैन धर्म और दर्शन के अपने समय के प्रसिद्ध विद्वान धर्मपाल व प्रभाचंद्र और देवभद्र को भी प्रतिष्ठित किया था। धर्मपाल को तो राज्य के सर्वोच्च सरस्वती सम्मान से भी सम्मानित किया था। इन ऐतिहासिक तथ्यों से यह स्पष्ट है कि भोज सिर्फ हिंदू ही नहीं बल्कि जैन धर्म के भी प्रबल पोषक थे। धार और मांडू के बीच नालछा नाम का गांव प्राचीन नलकच्छपुरम् का अवशेष है। यह नगर परमारों के समय कागज उद्योग के लिए विकसित किया गया था। भोज ने अपने क्षेत्र में कमल के फूलों की खेती को खूब प्रोत्साहित किया। नलकच्छपुरम् का कागज कमल के फूल की नालों से ही बनाया जाता था। परमारों के अस्त और सुल्तानों के कब्जे के बावजूद इस इलाके में यह उद्योग जारी रहा। इसके सबूत अब भी लंदन के ब्रिटिश म्यूजियम में मौजूद हैं। इन पर डॉ. भट्ट की अकादमी ने काफी महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाशित किए हैं।

शिलालेख हैं सबूत

पुरातात्विक शोध बताती हैं कि उज्जैन में भी भोज ने सरस्वती कंठाभरण बनवाया था। इस भवन का गर्भगृह प्रशस्ति के शिलाखंडों से भरा हुआ था। सन् 1132 में गुजरात के राजा जयसिंह सिद्धराज यहां आए। उन्होंने इस भवन के पुस्तकालय में व्याकरण, शब्दशास्त्र, शब्द अलंकार, ज्योतिष, तर्कशास्त्र, चिकित्सा, राजसिद्धांत, वास्तु, अंक व अध्यात्म आदि विषयों पर राजा भोज के लिखे हुए कई उपयोगी ग्रंथ स्वयं देखे। सरस्वती कंठाभरण नाम से भी भोज ने एक काव्यशास्त्र और दूसरा व्याकरण का ग्रंथ लिखा था। भोज की ही एक कृति 'अवनिकूर्मशतम्' तो धार की भोजशाला से ही शिलालेख के रूप में मिली। यह 83 पंक्तियों में उत्कीर्ण उस दौर की कला का एक गजब का नमूना है। मांडू के सरस्वती कंठाभरण के बारे में उल्लेख मिलता है कि यहां के छात्रावास के अध्यक्ष गोविंद भट्ट के पुत्र धनपति भट्ट को राजा भोज ने भूमि प्रदान की थी।

सतह पर कुछ, तह में कुछ

श्री राजपुरोहित की ही एक अन्य पुस्तक 'भोजराज' भी भोज निर्मित तीन संस्कृत पाठशालाओं के विस्तृत ब्यौरे पेश करती है। इसमें 'मांडव के प्राचीन अवशेष' नामक अध्याय में कहा गया है कि दिलावर खां के मकबरे के पूर्वी दरवाजे पर फारसी शिलालेख से यह जाहिर है कि 1405 में इस स्मारक को बनवाया गया था। मकबरे की दक्षिणी दीवार गिरने से मलबे में देवियों के अनेक चित्र व नाम सहित काले पत्थर का एक टुकड़ा प्राप्त हुआ था। भगवान शिव के तांडव नृत्य मुद्रा वाली प्रतिमा भी यहीं मिली। जब मांडू परमारों के आधिपत्य में आया तब यह नगर इतना आबाद था कि राजा भोज को यहां संस्कृत की विद्यापीठ के निर्माण की जरूरत महसूस हुई। मांडू की जामी मस्जिद के सामने बने अशरफी महल को आज भी मदरसा यानी विद्यालय कहा जाता है। यहां से संस्कृत का एक शिलालेख मिला, जिस पर वाग्देवी की स्तुति का कुछ भाग अंकित था। सरस्वती की एक खंडित मूर्ति भी मिली। बीजा मंडल के नाम से प्रसिद्ध विदिशा के विजय मंदिर के सिर्फ खंडहर ही बाकी हैं। 1992 में इसकी एक दीवार गिरी तो इतिहास की जानी-मानी असलियत भी बाहर आ गई और एक भव्य मंदिर के प्रमाण बीजा मंडल के मलबे से बाहर आने लगे। पुराने विदिशा में इस स्मारक को आक्रांताओं ने नेस्तनाबूत किया, जिसकी सतह पर कुछ और है और तह में कुछ और ! यह परमार राजवंश के राजा नरवर्मन का निर्माण था, जिसका हश्र भोजशाला की तरह हुआ।

राज्याभिषेक की परंपरा

डॉ. शशिकांत भट्ट प्रसिद्ध अखिल भारतीय मुद्रा एवं मुद्रिका अकादमी के निदेशक भी हैं। उन्होंने करीब तीन दशक पहले विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में एक संगोष्ठी में अपना शोधपत्र पढ़ा। वे भी यह मानते हैं कि आज जिन्हें भोजशाला कहा जाता है, उन भवनों का भोज के समय नाम सरस्वती कंठाभरण ही था। यह भवन समकालीन इतिहास में संस्कृत के प्रसिद्ध केंद्र थे। यहां भोज के विद्वानों की परिषद विचार-विमर्श के लिए जमा होती थी। सरस्वती के जन्मोत्सव वसंत पंचमी और विजयादशमी जैसे पर्वों पर यहां राज्य की ओर से महोत्सव आयोजित होते थे। डॉ. भट्ट का मत है- *'यही वे पवित्र स्थान थे, जहां नए राजा के राज्याभिषेक की परंपरा थी। इसीलिए जब चार सौ साल बाद दिलावर खां ने यहां खुद को सुल्तान घोषित किया तो यह जरूरी था कि उसका राज्याभिशेक उसकी परंपरा के मुताबिक यहीं हो। चूंकि यह सरस्वती के मंदिर और संस्कृत के केंद्र थे तो इनके स्वरूप को बदलना जरूरी था।'* अपनी ताकत की मान्यता के लिए आखिरकार सरस्वती कंठाभरणों को ध्वस्त कराया गया और उनकी जगह उसी के मलबे से तीन दूसरी बेतरतीब व बदसूरत इमारतों को आकार दे दिया गया। ये आज भी मौजूद हैं। डॉ. भट्ट कहते हैं कि इन्हें देखकर हम कभी इनके वास्तविक और वैभवशाली मूलरूप की कल्पना भी नहीं कर

सकते।

भोज की अधूरी निर्माण परियोजना

मध्यप्रदेश की राजधानी भोपाल से करीब 30 किलोमीटर दूर भोजपुर रायसेन जिले का हिस्सा है, जहां भोज के बहुआयामी व्यक्तित्व का श्रेष्ठतम प्रमाण पत्थरों पर आज भी मौजूद है। यह एक विशाल मंदिर है, जिसका निर्माण 115 फुट लंबे और 82 फुट चौड़े व 13 फुट ऊंचे पत्थर से बने प्लेटफार्म पर शुरू किया गया था। यह भोज की अधूरी निर्माण परियोजना है और मंदिर के सामने व दाई ओर विशाल चट्टानों पर इस अधूरी परियोजना के वे हिस्से देखे जा सकते हैं, जो मूल मंदिर में समायोजित होने थे। अपने पूरे निर्माण के साथ यह देश भर में अब तक मौजूद प्राचीन शिवमंदिरों में निश्चित ही एक हैरतअंगेज नमूना होता। चट्टानी मैदान पर राजा भोज के इंजीनियरों व कारीगरों के चिन्ह अंकित हैं। यह परिसर मंदिर के 50 राजमिस्त्रियों के नाम भी उजागर करता है। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि जब मेहमूद गजनवी ने अपने आखिरी हमले में सोमनाथ के मंदिर को ध्वस्त किया तो राजा भोज ने उस ऐतिहासिक विध्वंस के जवाब में भोजपुर में उससे भी विशाल देवालय के निर्माण की यह महत्वाकांक्षी परियोजना शुरू की, जो पूरी न हो सकी। भोज के समय यह मंदिर भोजपुर से भोपाल तक विस्तृत जलाशय पर स्थित नजर आता होगा। मंडीदीप तब इस जलाशय के बीच एक द्वीप की भांति स्थित रहा होगा। भोजपुर के पास उन प्राचीन बांधों के अवशेष आज भी देखे जा सकते हैं, जो

मंडी बामौरा का शिव मंदिर

भोज के इंजीनियरों के कौशल का सबूत देते हैं। लेकिन मांडू के सुल्तान होशंगशाह ने बेतवा का वह बांध तुड़वा दिया। तीन महीने में तीन सौ फुट चौड़े और करीब 90 फुट ऊंचे बांध को ध्वस्त किया गया। तीन साल लगे बांध को खाली होने में और अगले तीस साल में यह इलाका खेती के लिए तैयार हो सका।

दूर-दूर तक बिखरी विरासत

सच तो यह है कि जिन्होंने भी परमारकालीन मंदिरों के स्थापत्य को निकट से देखा है, वे बहुत सरलता से धार, मांडू या उज्जैन के इन स्मारकों की प्राचीनता को समझ सकते हैं। चंद उदाहरण हमारे आसपास के- भोपाल से करीब सवा सौ किमी दूर सागर जिले के मंडी बामौरा में एक प्राचीन शिवमंदिर है। इस मंदिर के शिखर से लेकर निचले हिस्से तक चारों ओर प्रतिमाओं और कलाकृतियों को खंडित कर दिया गया, लेकिन यह अपने मूल आकार और ऊँचाई में सुरक्षित है। खंडित पत्थरों के ढेर चारों ओर बिखरे हुए हैं। कुछ स्तंभों व प्रवेश द्वार की नक्काशी परमारों की निर्माण शैली का बेहतरीन नमूना है। यहीं से 22 किमी. दूर विदिशा जिले का उदयपुर गांव है। यहां 11वीं सदी में बना नीलकंठेश्वर मंदिर अपने मूल रूप में बचा रह गया। यह भोज के बाद परमार वंश में हुए उदयादित्य ने बनवाया। यह मंडी बामौरा के मंदिर से आकार में बड़ा, लेकिन डिजाइन वही है। धार में भी विजय मंदिर के नाम से एक स्मारक भोजशाला से भी भव्य रूप में कभी रहा होगा, जिसकी पहचान आज लाट मस्जिद के रूप में होती है। इन सब प्राचीन देवालयों के निकट जलस्रोतों के निर्माण की भी परंपरा थी। आज भी सभी के परिसरों के पास पुरानी बावड़ियां या तालाब जीर्णशीर्ण हालत में नजर आते हैं।

एक हजार साल बीत गए। अब राजा भोज भी इतिहास का हिस्सा हैं, दिलावर खां गौरी भी और होशंगशाह भी। अफगानिस्तान के जिस भगोड़े हत्यारे की तकदीर भोज की विरासत के एक टुकड़े भोजपाल की तरफ खींच लाई थी, वह दोस्त मोहम्मद खान भी इतिहास का हिस्सा है। वह सरस्वती कंठाभरण भी इतिहास का हिस्सा है, जिसे भोजशाला के खंडहरों की शक्ल में सामने लाया गया और वह जगदीशपुर भी, जिस पर इस्लामनगर का रंगरोगन चढ़ा दिया गया। सहिष्णुता और शालीनता के मुलम्मे में इतिहास की सच्चाइयों को दफन करने की कोशिश बेकार है। अतीत के इन किरदारों ने अपनी-अपनी भूमिकाएं निभाई हैं। एक कहानी में नायक ही नहीं होते, खलनायकों की भी अपनी अहमियत है। इतिहास के ये सारे किरदार सारे भारतीयों की साझा विरासत हैं। एक हजार सालों में जो कुछ भी हुआ है, उस मारकाट, तोड़फोड़ और जोर-जबर्दस्ती के अंधड़ के पार राजा भोज की चमक अब भी आंखों को चौंधियाती है। सूर्य पर लगा ग्रहण कैसा भी हो, उसे निगल नहीं सकता। सरस्वती कंठाभरण भोज ही बना सकते थे और ऐसे पावर-हाउस की ऊर्जा ही भोज जैसे शासकों को वह चमक दे सकती थी, जो दस सदियों के बावजूद बर करार है।

(लेखक युवा पत्रकार हैं।) ❖

उदयपुर का नीलकंठेश्वर मंदिर

सभी छायाचित्र : शशांक पाण्डे